तुलसीदास के काव्य में समन्वयवादी दृष्टिकोण

डॉ.अरुण घोगरे, प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग बी.एस.पाटिल महा. परतवाड़ा

प्रस्तावना :

अनादि काल से ही भारतीय संस्कृति और समाज उदार और समन्वयवादी विचारधारा को लेकर अग्रसर है। यही कारण है कि इस देश में वैदिक काल के अंत तक भेदभाव ऊंच-नीच और असमानता का वातावरण कहीं दिखाई नहीं देता। भारतीय समाज के आदर्श और आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित्र और व्यक्तित्व में यह सब गुण चरितार्थ होते हैं। वाल्मीकि रामायण इन सब प्रमाणों का प्रथम दस्तावेज है।भारतीय समाज इसी परंपरा का निर्वाह निरंतर करते हुए आ रहा है। तुलसी के आराध्य राम हैं, इसलिए राम के आदर्शों का अनुकरण एवं अनुसरण करते हुए वे दिखाई देते हैं। अतः तुलसी के सम्पूर्ण साहित्य में समन्वयवाद का दृष्टिगोचर होना कोई अतिशयोक्ति नहीं है।

महाकवि तुलसीदास की भारतीय संस्कृति में अटूट आस्था होने के कारण वे भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी चेतना को अपने जीवन और साहित्य में साकार करते दिखाई पड़ते हैं। तुलसी ने तत्कालीन समाज की जन भावनाओं को पहचानते हुए उसे संभ्रम की स्थिति से बाहर निकाल कर एक साहित्यिक समाधान देने का भरपूर प्रयास किया है। उन्होंने लोकमंगल की भावना का अनुकरण करते हुए समन्वय का मार्ग अपनाया। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी तुलसी के समन्वय वादी दृष्टिकोण के कारण लोकनायक की संज्ञा देते हुए कहते हैं कि - " लोकनायक वही हो सकता है जो समन्वय कर सके क्योंकि भारतीय जनता में नाना प्रकार की परस्पर विरोधी संस्कृतियाँ, साधनाएँ, जातियाँ, आचार, निष्ठा और विचार पद्धतियाँ प्रचलित हैं। तुलसी का सारा काव्य समन्वय की विराट चेष्टा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान का समन्वय, भाषा और संस्कृति का समन्वय, निर्गुण और सगुण का समन्वय, पंडित और पांडित्य का समन्वय है। रामचरितमानस शुरू से ही अंत तक समन्वय-काव्य है।"१

तुलसी जनमानस में व्याप्त निर्गुण और सगुण को लेकर द्वंद की स्थिति का समाधान प्रस्तुत करते हुए कहते हैं कि ईश्वर का निराकार और निर्गुण रूप जब प्रकट हो जाता है तो वह साकार एवं सगुण प्रतीत होने लगता है-

" सगुनहि अगुनहि नहिं कछु भेदा।
गावहिं मुनि पुराण बुध वेदा।
अगुन अरूप अलख अज जोई।
भगत प्रेम बस सगुन सो होई।"२

तुलसीदास जी ने अपने समय में राम और शिव, शैव और वैष्णव संबधी विद्वेष को जनमानस में कम करने का प्रयास किया-

"सिव द्रोही मम दास कहावा।
सो नर सपनेहुँ मोहिं न पावा।
संकर बिमुख भगत चह मोरी।
सो नारकी मूढ़ मति थोरी। "३

तुलसीदास की शैव और वैष्णव संप्रदाय के मध्य समन्वय स्थापित करने की विचारधारा पर प्रकाश डालते हुए आचार्य रामचंद्र शुक्ल लिखते हैं कि - " शैवों और वैष्णवों के बीच बढ़ते हुए विद्वेष को उन्होंने अपनी सामंजस्य व्यवस्था द्वारा बहुत कुछ रोका जिसके कारण उत्तरी भारत में वैसा भयंकर रूप धारण न कर सका जैसा उसने दक्षिण में किया।" ४ तुलसी अपने काव्य में भक्ति और ज्ञान में समन्वय स्थापित करते हुए मनुष्य को जीवन के क्लेश नष्ट करने का संदेश देते हैं-" भगतिहि ग्यानहि नहिं कछु भेदा।

उभय हरहिं भव संभव खेदा।"५

महाकवि तुलसीदास ने रामचरित मानस में अपनी रचनात्मक कुशलता का परिचय देते हुए संस्कृत और अवधी के भाषाई सामंजस्य की अद्‌भुत झाँकी प्रस्तुत की है -

"जय राम रमा रामरमनं।
भवताप भयाकुल पाहि जनं।
सरनागत मागत पाहि प्रभो।
अवधेश सुरेस रमेस विभो। "६

तुलसी ने मानस में जातिगत भेदभाव और ऊँच-नीच की वृत्ति से अलग समाज में एकता एवं भाईचारे का संदेश देते हुए ब्राह्मण कुल में उत्पन्न गुरु वशिष्ठ को शुद्रकुल में उत्पन्न निषादराज से भेंट करते हुए दिखाकर समन्वय का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया। राम और निषादराज तथा भरत और निषादराज की भेंट भी समन्वय का आदर्श प्रस्तुत करती है -

"करत दण्डवत देखि तेहि भरत लीन्ह उर लाइ।
मनहुँ लखन ब भेंट भई प्रेम न हृदय समाइ।"७

तुलसी ने समाज और देश की समृद्धि एवं शांति के लिए शासक-प्रजा के सामूहिक तथा समन्वित प्रयास की आवश्यकता पर बल दिया -

"मुखिया मुखु सो चाहिऐ खान पान कहुँ एक।
पालइ पोषई सकल अंग तुलसी सहित बिबेक। "८

तुलसी के विचारों में धार्मिक कट्टरता का विरोध एवं सांस्कृतिक समन्वय की भावना दिखाई पड़ती है। वे जातिगत बंधनों से मुक्त और धार्मिक सीमाओं से परे मस्जिद में भी शांति से सोने की बात करते हुए देखे जा सकते हैं -

" धूत कहौ, अवधूत कहौ, रजपूतु कहौ, जोलहा कहौ कोऊ।
काहूकी बेटीसों बेटा न ब्याहब, काहू की जाति बिगार न सोऊ।
तुलसी सरनाम गुलाम है रामको, जाको रूचै सो कहै कछु ओऊ।
माँगि कै खैबो, मसीतको सोइबो, लैबोको एकु न दैबेको दोऊ।" ९

निष्कर्ष :

अतः निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि तुलसी का साहित्य समन्वय का ऐसा सुगन्धित और सुगठित गुलदस्ता है, जिसके सुवास से भारतीय समाज सकल विश्व में समन्वयवाद का बीजारोपण कर मतमतांतर और भिन्नता के वातावरण का भविष्य में समूल नाश कर सकेगा।तुलसीदास भारतीय संस्कृति की समन्वयवादी धारा का निर्वाह करते हुए अपने काव्य में सामाजिक सामंजस्य और समन्वय स्थापित करने के लिए प्रतिबद्ध नजर आते हैं। रामचरितमानस तो जैसे भारतीय समाज और संस्कृति को समझने का एक महत्वपूर्ण दस्तावेज-सा बन गया है। कवितावली एवं दोहावली भी तुलसी की समन्वयवादी विचारधारा का आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

संदर्भ सूची -

१ - हिंदी साहित्य की भूमिका - हजारी प्रसाद द्विवेदी पृ. १०१
२ - रामचरित मानस (बालकांड - ११५/१)पृ. १०५
३ - रामचरित मानस (लंकाकांड-१/४) पृ. ७०९
४ - हिंदी साहित्य का विकास - आचार्य रामचंद्र शुक्ल पृ. ११५
५ - रामचरित मानस (उत्तरकांड-११५/७) पृ. ९४३
६ - रामचरित मानस (उत्तरकांड-१३ ख/छंद - १) पृ. ८४६
७ - रामचरित मानस (अयोध्याकांड-दोहा-१९३) पृ. ४५८
८ - दोहावली -५२२ पृ. १४७
९ - कवितावली - (उत्तरकांड-६)पृ.११७